P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11* February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

भारतीय कला में प्रतीकों का भावपूर्ण कलात्मक निरूपण

नमिता त्यागी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर,
ड्रॉइंग एवं पेंटिंग विभाग,
फैकल्टी ऑफ आर्टस
दयाल बाग एजूकेशनल इन्स्टीट्यूट,
दयालबाग, आगरा

सारांश

भारतीय कला की यह प्रधान विशेषता रही है कि वह आध्यात्मिक एवं धार्मिक रही है, कला का सूक्ष्म पहलू धर्म और अध्यात्म के समन्वय से उत्प्रेरित रहा है। भारतीय संस्कृति में पूजा उपासना, अनुष्ठानों में प्रयुक्त प्रतीकों का विशेष महत्व रहा है, जैसे–कलश, नारियल, रथ, माला, तिलक, स्वास्तिक, चक्र, त्रिशूल, चन्दन, ध्वज, शंख, चँवर, प्रभामण्डल, रुद्राक्ष, दीपक इत्यादि ।भारतीय कलाएँ अपने विभिन्न स्वरूपों में यथा चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य, संगीत एवं नृत्य कलाओं से मंडित है। इसी परिप्रेक्ष्य में मैं अपने शोध पत्र में भारतीय कला में निहित धर्म और अध्यात्म की अभिव्यक्ति को प्रतीक चिह्नों के माध्यम से प्रस्तुत कँरूगी । ये प्रतीक चिह्न हमारी सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्राचीन काल से कला एवं साहित्य में वर्णित है एवं इनका गूढार्थ भी बहुत गरिमापूर्ण है। मूर्तिकला के अन्तर्गत कलाकारों ने इन प्रतीक चिह्नों का निरूपण करके अमूर्त आध्यात्मिक भावनाओं की चेतनता को जनमानस में प्रसारित किया। ये प्रतीक चिह्न मानव की कल्याणकारी भावना के साथ–साथ मानव के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्तरों पर चैतन्यता के भावों को स्पर्श करते है।

संस्कृति के यह चिह्न हमे प्रागैतिहासिक काल से मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं और इस बात की पुष्टि करते है कि धर्म उपासना, पूजाभाव की यह कल्याणकारी अन्तर्निहित भावना मानव में प्रागैतिहासिक काल से ही उन्नत थी। भारतीय संस्कृति में मागंलिक प्रतीकों में स्वास्तिक, पीपल वृक्ष, चक्र, का स्थान विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण है। स्वस्तिक की रचना में सृष्टि के सृजन चेतना एवं विकास का भाव समाहित है। पीपल वृक्ष की पावनता के विषय में कहा जाता है कि इसमें देवताओं का वास होता है। चक्र' हमारी संस्कृति में ऐसा अद्वितीय प्रतीक है, जो जीवन की गतिशीलता का सतत् सन्देश देता है। पौराणिक आख्यानों के अनुसार चक्र भगवान विष्णु के आयुध के रूप में 'चक्र सुदर्शन' सत्य की रक्षा एवं असत्य का संहार करने का द्योतक है। इन प्राकृतिक और भौतिक घटनाओं के अमूर्त आध्यात्मिक भावों को मस्तिष्क द्वारा ग्रहण किया है और कला के माध्यम से उन्हें उपयुक्त चिह्नों के माध्यम से कलापूर्ण अभिव्यक्त किया गया है।

मुख्य शब्द : प्रतीक चिह्न, स्वास्तिक, पीपल वृक्ष, चक्र।

प्रस्तावना

भारतीय धर्म, दर्शन, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि जहाँ विश्व के विद्वानों, मनीषियों, शोधार्थियों, जिज्ञासुओं के आकर्षण का केन्द्र बने हुए हैं, वहीं हमारी सांस्कृतिक थाती से संवलित मानव जीवन महामानव की गरिमा से मंडित हो देवतत्व तक पहुँच कर समलंकृत होने की क्षमता रखता है।

भारतीय धर्म, दर्शन, साहित्य, पुरातत्व, इतिहास, कला आदि जहाँ विश्व के विद्वानों, मनीषियों, शोधार्थियों, जिज्ञासुओं के आकर्षण का केन्द्र बने हुए हैं, वहीं हमारी सांस्कृतिक थाती से संवलित मानव जीवन महामानव की गरिमा से मंडित हो देवतत्व तक पहुँच कर समलंकृत होने की क्षमता रखता है।

कलाएँ भी मानवीय क्रिया की उपज है, एक ऐसी उपज जिससे मानव अपने मस्तिष्क और कल्पना को शिक्षित, प्रभावित और अनुकूलित करता है। ऐतरेय ब्राहमण के एक अनुच्छेद के अनुसार कला मनुष्य के अपने स्वरूप को सुसंस्कृत करने का एक साधन है। यह वह साधन है जहाँ मानव अपनी आन्तरिक अभिव्यक्ति के माध्यम से योग की भूमिकाओं को स्पर्श करता है। कला मनुष्य के मनोभावों के भीतर बैठती है और इस प्रकार मनुष्य को उसके वास्तविक स्वरूप, उसके चित्त की प्रवृत्तियों, उसकी वासनाओं का साक्षात्कार करती है। इतना ही नहीं वह भावनाओं को शुद्ध करती है और चित्त शुद्धि का साधन बनती है।

भारतीय संस्कृति में कला को कला के लिये ही नहीं अपितु परमतत्व की प्राप्ति माना गया है। विष्णुधर्मोत्तर पुराण के चित्रसूत्रं में कहा गया है कि–

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11* February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

कलानां प्रवरं चित्रं। धर्मकामार्थकोक्षदूम्।

– चित्रसूत्र, 43/37.

इस परिप्रेक्ष्य में प्राचीन भारतीय कला भारतीय संस्कृति की इस विचारधारा का पूर्णतः पालन करती है। भारतीय कला की यह प्रधान विशेषता रही है कि वह आध्यात्मिक एवं धार्मिक रही है, कला का सूक्ष्म पहलू धर्म और अध्यात्म के समन्वय से उत्प्रेरित रहा है। भारतीय संस्कृति में पूजा उपासना, अनुष्ठानों में प्रयुक्त प्रतीकों का विशेष महत्व रहा है, जैसे–कलश, नारियल, रथ, माला, तिलक, स्वास्तिक, चक्र, त्रिशूल, चन्दन, ध्वज, शंख, चँवर, प्रभामण्डल, रुद्राक्ष, दीपक इत्यादिइन प्राकृतिक और भौतिक घटनाओं के अमूर्त आध्यात्मिक भावों को मस्तिष्क द्वारा ग्रहण किया है और कला के माध्यम से उन्हें उपयुक्त चिहनों के माध्यम से अभिव्यक्त किया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य

भारतीय संस्कृति में निहित प्रतीक चिह्नों के गूढ़ार्थ को भारतीय कला में रचनात्मक सृजनशीलता के साथ सदैव आम्तसात किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र के माध्यम से उनके कलात्मक पक्ष, सांस्कृतिक पक्ष व कला में निहित उनकी रचनाशीलता को प्रस्तुत किया जायेगा।

साहित्यावलोकन

भारतीय संस्कृति में प्रतीकों की भाषा सदैव ही अपने रचनात्मक पक्ष को प्रस्तुत करती है। संस्कृति के गूढार्थों को ये प्राचीन प्रतीक चिह्न अपने स्वरूपों में प्रकट करते आए हैं। भारतीय कला में भी इनकी रचनात्मकता को भिन्न–भिन्न स्वरूपों में प्रस्तुत किया गया है। शोमनाथ पाठक,सांस्कृतिक प्रतीक कोष, प्रभाव प्रकाशन, दिल्ली, 2001 एवं Heinrich Zimmer, Myths and Symbols in Indian Art and Civilization, April 4th2017, publish, Princeton University Press पुस्तक भारतीय संस्कृति में निहित इन प्रतीक चिह्नों के सांस्कृतिक व धार्मिक अर्थों की सविस्तार चर्चा करते हैं। किस प्रकार यह प्राचीन प्रतीक चिह्न अपनी विशेषताओं में विशिष्ट हैं। प्रतीक चिह्नों का उद्भव उनके विकास की भी चर्चा इन पुस्तकों में निहित है। डॉ. जगदीश गुप्त, प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली, 1060 पुस्तक प्रागैतिहासिक कला की सम्पूर्ण व्याख्या प्रस्तुत करती है। शैल चित्रों की विशेषताएँ उनकी कलात्मकता, उनके स्वरूप व लक्षणों का पूर्ण चित्रित प्रस्तुतीकरण इस पुस्तक में निहित है। धर्म का प्रभाव भारतीय कला पर अक्षण्णु रहा है। भारतीय कला में बौद्ध की उपस्थिति को प्रारम्भ में प्रतीक चिहनों द्वारा ही रूपायित किया गया, इस सन्दर्भ में पुस्तक उड़ीसा में जैन धर्म, प्रो. लालचन्द जैन, जोरावरमल संपत लाल बाकलीवाल प्रकाशन, 2006 कटक, उडीसा, जैन धर्म की सम्पूर्ण व्याख्या प्रस्तुत करती है। प्रस्तुत शोध पत्र में प्रतीकों के अर्थों उनकी कलापूर्ण विशेषताओं व धार्मिक सांस्कृतिक महत्व को उनकी रचनात्मक सृजनशीलता के साथ प्रस्तुत किया गया है जो इस शोध पत्र को मौलिकता प्रदान करता है।

भारतीय कलाएँ अपने विभिन्न स्वरूपों में यथा चित्रकला, मूर्तिकला, स्थापत्य, संगीत एवं नृत्य कलाओं से मंडित है। इसी परिप्रेक्ष्य में मैं अपने शोध पत्र में भारतीय कला में निहित धर्म और अध्यात्म की अभिव्यक्ति को प्रतीक चिह्नों के माध्यम से प्रस्तुत करूँगी । ये प्रतीक चिह्न हमारी सांस्कृतिक धरोहर के रूप में प्राचीन काल से कला एवं साहित्य में वर्णित है एवं इनका गूढार्थ भी बहुत गरिमापूर्ण है। मूर्तिकला के अन्तर्गत कलाकारों ने इन प्रतीक चिह्नों का निरूपण करके अमूर्त आध्यात्मिक भावनाओं की चेतनता को जनमानस में प्रसारित किया। ये प्रतीक चिह्न मानव की कल्याणकारी भावना के साथ–साथ मानव के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक स्तरों पर चैतन्यता के भावों को स्पर्श करते है।

भारतीय संस्कृति में मागंलिक प्रतीकों में स्वास्तिक का स्थान विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण है। 'वाल्मीकि रामायण' में उल्लेख है कि कल्याण की कामना से 'स्वस्तिक का अकंन ध्वजों पर किया जाता था–

अन्याः स्वस्तिक विरोधा महाघण्टा धरावराः।
शोममानाः पताकिन्यों युक्तवाहाः सुसंहता।।

स्वास्ति शब्द कल्याण का द्योतक है उसकी शाब्दिक विवेचना करने पर स्पष्ट होता है– 'स्वस्ति' सु–अस् धातु से बना है सु का अर्थ – सुन्दर अथवा मंगल तथा 'अस्' का अर्थ 'अस्तित्व' या उपस्थिति अर्थात सर्वमंगल कल्याण की दृष्टि से, सृष्टि में चेतना की सर्वव्यापकता ही स्वास्तिक की गुढ़तम रहस्यमता है। ऋगवेद में 'स्वास्ति' के देवता 'सवितृ' देव अर्थात सूर्य का उल्लेख सविस्तार किया गया है जो चारों दिशाओं को आलोकित करता है। इसी परिप्रेक्ष्य में 'स्वास्तिक' की चारों भुजाएँ चारों दिशाओं के कल्याण के प्रतीक रूप मानी गयी है। अर्थात उसमें चारों दिशाओं के प्रति चेतनता व्याप्त है जो हमें इस भौतिक संसार के प्रति जागरूक करती है। दिव्य गुणों से चेतना परिपूर्ण स्वास्तिक की रचना में सृष्टि के सृजन चेतना एवं विकास का भाव समाहित है।

संस्कृति के यह चिह्न हमें प्रागैतिहासिक काल से मिलने प्रारम्भ हो जाते हैं और इस बात की पुष्टि करते है कि धर्म उपासना, पूजाभाव की यह कल्याणकारी अन्तर्निहित भावना मानव में प्रागैतिहासिक काल से ही उन्नत थी। बनिया बेरी (पंचमढ़ी) में गुणन चिह्न के सामान चित्रित अबाहु स्वास्तिक के बाँयी ओर आदिम शिरोभूषा वाली तीन मानवाकृतियाँ पूजा परक नर्तन की मुद्रा में चित्रित है। स्वास्तिक के ऊपर की ओर एक धनुर्धर चित्रित है।

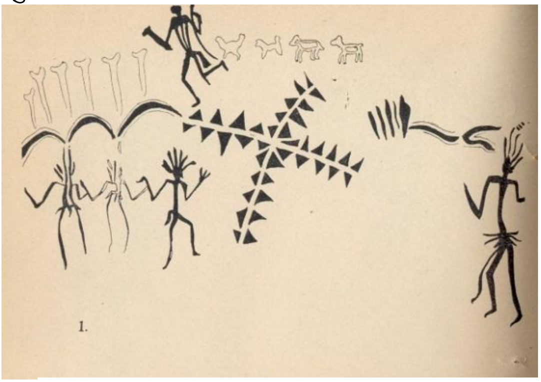

बनिया बेरी (पचमढ़ी), अबाहु स्वास्तिक

भारतीय संस्कृति के मांगलिक प्रतीकों में स्वास्तिक का स्थान विशिष्ट एवं महत्वपूर्ण है। वाल्मीकि

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11* February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

रामायण में उल्लेख है कि कल्याण की दृष्टि से स्वास्तिक का अंकन ध्वजों पर किया जाता था। पूर्ण या सबाहु स्वास्तिक का विकास मूलतः अबाहु स्वास्तिक (+) से हुआ है जो धन चिह्न और गुणन (+ x) के रूपों में अंकित किया जाता था। भारतीय शिला चित्र में प्रारम्भिक अवस्था में केवल अबाहु स्वास्तिक चित्रित मिलता है, इसमें भारतीय संस्कार स्पष्ट लक्षित होता है।

स्वास्ति चिह्न सील, सिन्धु घाटी

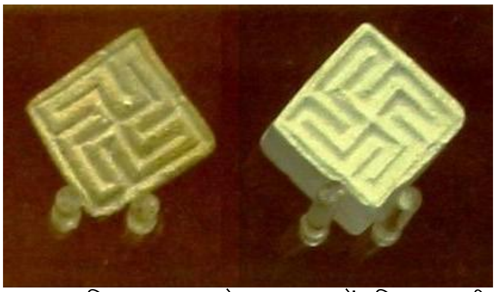

स्वास्तिक पूजा के प्रमाण हमें सिन्धु घाटी की सीलों पर भी प्राप्त होते है जिनमें पूर्ण स्वास्तिक को दाँयी एवं बाँयी दोनों ओर से उत्कीर्ण किया गया है। यद्यपि सिन्धु सभ्यता से हमें किसी धार्मिक स्थान के अवशेष प्राप्त नहीं होते, किन्तु मातृदेवी की मृण मूर्तियों एवं स्वास्ति चिह्न की सीलों से यह अवश्य ज्ञात होता है कि इस समय धार्मिक चेतनता व्याप्त थी।

उदयगिरी खण्डगिरी, हाथी गुम्फा

दूसरी शताब्दी में निर्मित ओडिशा की उदयगिरी खण्डगिरी गुफाओं में, हाथी गुम्फा से प्राप्त एक शिलालेख के दाँयी ओर स्वास्तिक चिह्न उत्कीर्ण है राजा खारवेल द्वारा निर्मित यह गुफाएँ जैन धर्म से सम्बन्धित है।

मौर्यकालीन निर्मित भरहुत के स्तूप के वेदिका स्तम्भों में भी स्वास्तिक चिह्न को बनाकर कल्याणकारी भावनाओं का संचरण किया गया है। स्तम्भों पर निर्मित फुल्लों के मध्य, नारी के आभूषणों में, अलंकरणों के साथ अथवा स्वतन्त्र रूप में भी इसका उत्कीर्णनन प्राप्त होता है।

भरहुत स्तूप, वेदिका स्तम्भ

स्वास्तिक पूजा प्रगैतिहासिक शिला चित्रों, सिन्धु घाटी की सीलों, जैन बौद्ध तथा हिन्दु धर्म प्रतीकों और लोक कला के अभिप्रायों, सभी को एक बिन्दु पर लाकर मिलाती हुयी प्रतीत होती है। इससे देश व काल दोनों की ही दृष्टि से व्यापक परम्परा का बोध होता है। सर्वत्र शुभकारक एवं सुखद, स्वास्तिक की आकृति उकेर कर बहुमुखी विकास की कामना चिरकाल से की जाती रही है।

द्वितीय प्रतीक चिह्न बौद्धि वृक्ष का है। अतीत से अब तक पीपल वृक्ष की पावनता हमारी संस्कृति में अक्षुण्ण बनी हुई है। संस्कृत साहित्य में प्रतीक को अश्वत्थ कहा गया है। इसका अंग्रेजी नाम Sacrid fig है इसे लैटिन में Ficus रेलीजिओसा कहते है अश्वत्थ का कुल Moraceae (मोरासिआ) है व इसका वर्ग वटादि है। इस कारण कुछ विद्वान इसे वट वृक्ष के नाम से भी बुलाते है। भगवान श्री कृष्ण ने भी इस वृक्ष की महत्ता का वर्णन किया है–

अष्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणा च नारदः।
गन्धवर्णि चित्ररथः सिद्वानां कपिलों मुनि।।
– श्री मदभगवद् गीता 10/26

पीपल वृक्ष की पावनता के विषय में कहा जाता है कि इसमें देवताओं का वास होता है–

मूलतः ब्रह्मरूयाय मध्यत्तो विष्युरूपिणः।
अग्रतः षिवरूयाय अष्वथाय नमो नमः।।

अर्थात पीपल के वृक्ष के मूल में विधाता स्वयं विराजमान रहते हैं, मध्य भाग में विष्णु तथा अग्रभग में उन्मुक्त घटाओं वाले भगवान शिव का वास होता। वैदिक काल में इसे ब्रह्मवृक्ष कहा जाता था तथा इसे काटने वाले को ब्रह्महत्यारा माना जाता था एवं ब्रमविधा भी प्रायः इस वृक्ष के नीचे की जाती थी। जो साधक की साधना में प्राणवायु अर्थात चेतनता को सर्वदा प्रसारित करता है, यही उर्जा हमारी प्रज्ञा अथवा चैतन्यमा में सहायक ही नहीं वरन् अपरिहार्य है।

सांची स्तूप तोरण द्वार,

यह चित्र सांची स्तूप के तोरण द्वार का है जिसमें बौद्धिवृक्ष की पूजा का दृश्य है। सम्पूर्ण जन संकुल वृक्ष की पूजा के लिये एकत्रित है। जन कल्याण की दृष्टि से भी यह वृक्ष अत्यन्त लाभकारी है इस वृक्ष की टहनियाँ, पत्तियाँ, जड़े एवं फल सभी अत्यधिक उपयोगी है।

P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-11* February 2019
E: ISSN NO.: 2455-0817 Remarking An Analisation

साँची स्तूप, वृक्ष पूजा

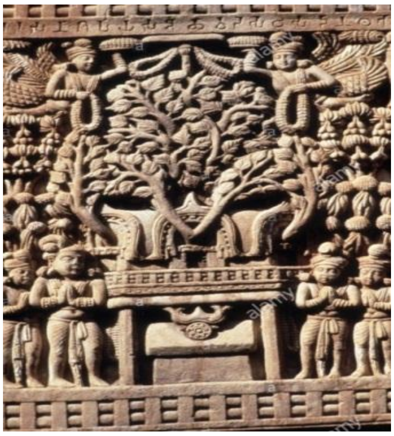

भरहुत स्तूप वेदिका स्तम्भ, वृक्ष पूजा

दूसरा चित्र भी साँची स्तूप के तोरण के स्तम्भ पर उत्त्कीण है जिसमें पृथ्वीवासी के साथ–साथ गन्धर्व आकाशचर भी वृक्ष पूजा में संलग्न दर्शाये गये है। पीपल के पेड़ की परिक्रमा का भी विशेष विधान है, क्योंकि इसकी छाया व वायु पित्तशामक होती है, इसकी छाल कफनाशक, व्रण, वमन, वात तथा रक्त के अनेक रोगों में औषिधि के रूप में प्रयुक्त की जाती है।

तीसरा चित्र भरहुत स्तूप के वेदिका स्तम्भ पर उत्कीर्ण है जिसमें वृक्ष पूजा का मनोहरी दृश्य है।

इन तीनों दृश्यों में बौद्धिकवृक्ष का अंकन बुद्ध के प्रतीक स्वरूप किया गया है क्योंकि पीपल वृक्ष के समस्त गुणों के कारण सिद्धार्थ को इसी वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था फलस्वरूप उन्हें बुद्धत्व की प्राप्ति यही ज्ञान जन कल्याण हेमु उन्होंने अपने शिष्यों को दिया ताकि वह संसार में कल्याण हेतु निमित्त होते हुये जीवन की वास्तविकता अर्थात अपनी चेतना को उस परम् अंश या परम् चेतन में समाहित कर सकें जिसके हम अंशी है। यही हमारे जीवन का परम् उद्देश्य एवं परम् चैतन्यता की प्राप्ति में एक आवश्यक तथ्य है। इसी कारण लाभकारी मंगलकारी एवं मोक्षकारीभावों को ध्यान में रखते हुयें वृक्ष का मनोहारी अंकन सर्वत्र दृष्टिगोचर है।

तीसरा प्रतीक चिन्ह चक्र हमारा ऐसा अद्वितीय प्रतीक है जो जीवन की गतिशीलता का सतत् संदेश देता है। भगवान विष्णु के अवतार श्री कृष्ण को भी चक्रधारी बनकर अपने भक्त अर्जुन के सामने प्रकट होना पड़ा था। अर्जुन ने भगवान से निवेदन किया–

किरीटिनं गदिनं चक्रहसभिच्छामित्वां द्रष्टुमहं
तैनेव रूपेण चतुर्भुजेन सहस्रबाहो भव विष्वमूर्ते।।
– श्री मद्भगवद् गीता, 11/43

अर्थात मैं वैसे ही आपको मुकुट धारण किए हुए तथा गदा और चक्र हाथ में लिये हुए देखना चाहता हूँ।

सिंहनपुर, चक्र

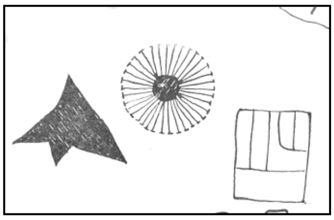

यह चित्र सिंहनपुर से प्राप्त है। 'चक्र' हमारी संस्कृति में ऐसा अद्वितीय प्रतीक है, जो जीवन की गतिशीलता का सतत् सन्देश देता है। पौराणिक आख्यानों के अनुसार चक्र भगवान, विष्णु के आयुध के रूप में 'चक्र सुदर्शन' सत्य की रक्षा एवं असत्य का संहार करने का द्योतक है।

मौर्य कालीन अशोक स्तम्भ

बौद्ध तथा जैन धर्म में भी चक्र को विशेष महत्व प्रदान किया जाता है। भगवान बुद्ध ने संबोधि प्राप्त करने के पश्चात् अपना प्रथम उपदेश सारनाथ में दिया था तथा 'धर्मचक्र–प्रवर्तन किया–अर्थात धर्म का जो पहिया रूक गया था उसे उन्होंने प्रवर्तित किया, जो अबाध गति से चलता रहेगा। इसी धर्म चक्र को उत्त्कीर्ण भी कराया गया, बोध गया की वेदिका में धर्म चक्र को दो सिंहों के ऊपर रखा दिखाया गया है।

यह चित्र मौर्य कालीन अशोक स्तम्भ है जिस पर चार सिंहों के मध्य एक चक्र स्वतन्त्र अवस्था से उत्त्कीर्ण

है तथा उसकी बैठकी पर भी चक्र को उत्त्कीर्ण किया गया है।

भरहुत तोरण,चक्र

यह चित्र भरहुत के तोरण पर निर्मित चक्र है जिसे बुद्ध के प्रतीक स्वरूप उत्त्कीर्ण कराया गया है जिसके दोनों ओर हाथ जोड़े आकृतियाँ बनायी गयी है। चक्र के बीच में जो दो अरे दिखाई देते है वह भी सदगुणों के प्रतीक रूप में होते है। चक्र के 24 अरे चौबीस घंटे चेतन एवं गतिशीलता का संदेश देती हैं, धार्मिक तथा मानसिक अग्रसारिता जिसका ध्येय उन्नति के सोपानों को पार करते हुए वास्तविक प्रज्ञा के ध्येय तक पहुँचना निहित है। इसी उद्देश्य के साथ भारतीय मूर्तिकला में समय–समय पर चक्र को उत्त्कीर्ण करवाया गया।

साँची स्तूप, धर्म चक्र

यह चित्र साँची स्तूप के स्तम्भों का है जिस पर धर्म चक्र का दृश्य उत्त्कीर्ण है। दो मानव आकृतियाँ दोनों तरफ उत्त्कीर्ण है। मौर्य कालीन स्तम्भों पर, साँची एवं भरहुत के स्तूप पर चक्र का उत्त्कीर्णन बहुलता के साथ किया गया है।

अमरावती, पाद चिह्न

अन्य चित्र बुद्ध के पाद चिह्नों का है जो अमरावती से प्राप्त है जिन पर चक्र, स्वास्तिक एवं त्रिरत्न अंकित है।

निष्कर्ष

इस प्रकार उपर्युक्त चिह्न ऋग्वेद से भी पूर्व अर्थात् प्रागैतिहासिक काल के हैं, और उस समय के धार्मिक अनुष्ठानों तत्कालीन जीवन दर्शन और संस्कृति के प्रतीक है। यह प्रतीक चिह्न भारतीय धार्मिक परम्पराओं का भावपूर्ण रूप से कलात्मक प्रस्तुति देते हैं। कलाकारों की यह सृजनात्मकता इन प्रतीकों को कलात्मकता के साथ साथ एक अर्थ प्रदान करती है, जो भारतीय कला में अपना एक विषेश स्थान रखते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डा. जगदीश गुप्त, प्रगैतिहासिक भारतीय चित्रकला, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली, 1960, पृष्ठ संख्या– 483.*
2. *डा. जगदीश गुप्त, प्रगैतिहासिक भारतीय चित्रकला, नेशनल पब्लिकेशन हाउस, दिल्ली, 1960, पृष्ठ संख्या– 418.*
3. *शोभनाथ पाठक, सांस्कृतिक प्रतीक कोष, प्रभाव प्रकाशन, दिल्ली, 2001, पृष्ठ संख्या 368–369.*
4. *प्रो. लालचन्द जैन, उडीसा में जैन धर्म, जोरावरमल संपत लाल बाकलीवाल प्रकाशन, 2006 कटक, उडीसा पृष्ठ संख्या– 82*
5. *शोभनाथ पाठक, सांस्कृतिक प्रतीक कोष, प्रभाव प्रकाशन, दिल्ली, 2001, पृष्ठ संख्या 368–369.*
6. *Heinrich Zimmer, Myths and Symbols in Indian Art and Civilization, April 4th 2017, Publish,Princeton University Press, pp*